स्नातक:हिंदी(प्रतिष्ठा),प्रथम वर्ष-

बिहारी

महाकवि बिहारीलाल का जन्म जन्म 1603 के लगभग ग्वालियर में हुआ। वे जाति के माथुर चौबे थे। उनके पिता का नाम केशवराय था। उनका बचपन बुंदेल खंड में कटा और युवावस्था ससुराल मथुरा में व्यतीत हुई, जैसे की निम्न दोहे से प्रकट है –

जनम ग्वालियर जानिये खंड बुंदेले बाल।

तरुनाई आई सुघर मथुरा बसि ससुराल।।

जयपुर-नरेश मिर्जा राजा जयसिंह अपनी नयी रानी के प्रेम में इतने डूबे रहते थे कि वे महल से बाहर भी नहीं निकलते थे और राज-काज की ओर कोई ध्यान नहीं देते थे। मंत्री आदि लोग इससे बड़े चिंतित थे, किंतु राजा से कुछ कहने को शक्ति किसी में न थी। बिहारी ने यह कार्य अपने ऊपर लिया। उन्होंने निम्नलिखित दोहा किसी प्रकार राजा के पास पहुंचाया –

नहिं पराग नहिं मधुर मधु, नहिं विकास यहि काल।

अली कली ही सा बिंध्यों, आगे कौन हवाल।।

इस दोहे ने राजा पर मंत्र जैसा कार्य किया। वे रानी के प्रेम-पाश से मुक्त होकर पुनः अपना राज-काज संभालने लगे। वे बिहारी की काव्य कुशलता से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने बिहारी से और भी दोहे रचने के लिए कहा और प्रति दोहे पर एक अशर्फ़ी देने का वचन दिया। बिहारी जयपुर नरेश के दरबार में रहकर काव्य-रचना करने लगे, वहां उन्हें पर्याप्त धन और यश मिला। 1664 में उनकी मृत्यु हो गई।

कृतियाँ

बिहारी की एकमात्र रचना सतसई है। यह मुक्तक काव्य है। इसमें 719 दोहे संकलित हैं। *बिहारी सतसई* श्रृंगार रस की अत्यंत प्रसिद्ध और अनूठी कृति है। इसका एक-एक दोहा हिंदी साहित्य का एक-एक अनमोल रत्न माना जाता है।

काव्यगत विशेषताएं

वर्ण्य विषय

बिहारी की कविता का मुख्य विषय श्रृंगार है। उन्होंने श्रृंगार के संयोग और वियोग दोनों ही पक्षों का वर्णन किया है। संयोग पक्ष में बिहारी ने हावभाव और अनुभवों का बड़ा ही सूक्ष्म चित्रण किया हैं। उसमें बड़ी मार्मिकता है। संयोग का एक उदाहरण देखिए –

बतरस लालच लाल की मुरली धरी लुकाय।

सोह करे, भौंहनु हंसे दैन कहे, नटि जाय।।

बिहारी का वियोग, वर्णन बड़ा अतिशयोक्ति पूर्ण है। यही कारण है कि उसमें स्वाभाविकता नहीं है, विरह में व्याकुल नायिका की दुर्बलता का चित्रण करते हुए उसे घड़ी के पेंडुलम जैसा बना दिया गया है – इति आवत चली जात उत, चली, छेसातक हाथ।

चढी हिंडोरे सी रहे, लगी उसासनु साथ।।

सूफी कवियों की अहात्मक पद्धति का भी बिहारी पर पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। वियोग की आग से नायिका का शरीर इतना गर्म है कि उस पर डाला गया गुलाब जल बीच में ही सूख जाता है –

औंधाई सीसी सुलखि, बिरह विथा विलसात।

बीचहिं सूखि गुलाब गो, छीटों छुयो न गात।।

भक्ति-भावना

बिहारी मूलतः श्रृंगारी कवि हैं। उनकी भक्ति-भावना राधा-कृष्ण के प्रति है और वह जहां तहां ही प्रकट हुई है। सतसई के आरंभ में मंगला-चरण का यह दोहा राधा के प्रति उनके भक्ति-भाव का ही परिचायक है –

मेरी भव बाधा हरो, राधा नागरि सोय।

जा तन की झाई परे, स्याम हरित दुति होय।

बिहारी ने नीति और ज्ञान के भी दोहे लिखे हैं, किंतु उनकी संख्या बहुत थोड़ी है। धन-संग्रह के संबंध में एक दोहा देखिए –

मति न नीति गलीत यह, जो धन धरिये ज़ोर।

खाये खर्चे जो बचे तो ज़ोरिये करोर।।

प्रकृति-चित्रण

प्रकृति-चित्रण में बिहारी किसी से पीछे नहीं रहे हैं। षट ऋतुओं का उन्होंने बड़ा ही सुंदर वर्णन किया है। ग्रीष्म ऋतु का चित्र देखिए – कहलाने एकत बसत अहि मयूर मृग बाघ। जगत तपोतन से कियो, दरिघ दाघ निदाघ।।

बहुज्ञता

बिहारी को ज्योतिष, वैद्यक, गणित, विज्ञान आदि विविध विषयों का बड़ा ज्ञान था। अतः उन्होंने अपने दोहों में उसका खूब उपयोग किया है। गणित संबंधी तथ्य से परिपूर्ण यह दोहा देखिए –

कहत सवै वेदीं दिये आंगु दस गुनो होतु।

तिय लिलार बेंदी दियैं अगिनतु बढत उदोतु।।

भाषा

बिहारी की भाषा साहित्यिक ब्रजभाषा है। इसमें सूर की चलती ब्रज भाषा का विकसित रूप मिलता है। पूर्वी हिंदी, बुंदेलखंडी, उर्दू, फ़ारसै आदि के शब्द भी उसमें आए हैं, किंतु वे लटकते नहीं हैं। बिहारी का शब्द चयन बड़ा सुंदर और सार्थक है। शब्दों का प्रयोग भावों के अनुकूल ही हुआ है और उनमें एक भी शब्द भारती का प्रतीत नहीं होता। बिहारी ने अपनी भाषा में कहीं-कहीं मुहावरों का भी सुंदर प्रयोग किया है। जैसे –

मूड चढाऐऊ रहै फरयौ पीठि कच-भारु।

रहै गिरैं परि, राखिबौ तऊ हियैं पर हारु।

शैली

विषय के अनुसार बिहारी की शैली तीन प्रकार की है –

- 1 – माधुर्य पूर्ण व्यंजना प्रधानशैली – श्रृंगार के दोहों में।
- 2 – प्रसादगुण से युक्त सरस शैली – भक्ति तथा नीति के दोहों में।
- 3 – चमत्कार पूर्ण शैली – दर्शन, ज्योतिष, गणित आदि विषयक दोहों में।

रस

यद्यपि बिहारी के काव्य में शांत, हास्य, करुण आदि रसों के भी उदाहरण मिल जाते हैं, किंतु मुख्य रस श्रृंगार ही है।

छंद

बिहारी ने केवल दो ही छंद अपनाए हैं। दोहा और सोरठा। दोहा छंद की प्रधानता है। बिहारी के दोहे समास-शैली के उत्कृष्ट नमूने हैं। दोहे जैसे छोटे छंद में कई-कई भाव भर देना बिहारी जैसे कवि का ही काम था।

अलंकार

अलंकारों की कारीगरी दिखाने में बिहारी बड़े पटु हैं। उनके प्रत्येक दोहे में कोई न कोई अलंकार अवश्य आ गया है। किसी-किसी दोहे में तो एक साथ कई-कई अलंकारों को स्थान मिला है। अतिशयोक्ति, अन्योक्ति और सांगरूपक बिहारी के विशेष प्रिय अलंकार हैं अन्योक्ति अलंकार का एक उदाहरण देखिए –

स्वारथ सुकृत न श्रम वृथा देख विहंग विचार।

बाज पराये पानि पर तू पच्छीनु न मारि।।

साहित्य में स्थान

किसी कवि का यश उसके द्वारा रचित ग्रंथों के परिमाण पर नहीं, गुण पर निर्भर होता है। बिहारी के साथ भी यही बात है। अकेले सतसई ग्रंथ ने उन्हें हिंदी साहित्य में अमर कर दिया। श्रृंगार रस के ग्रंथों में बिहारी सतसई के समान ख्याति किसी को नहीं मिली। इस ग्रंथ की अनेक टीकाएं हुईं और अनेक कवियों ने इसके दोहों को आधार बना कर कवित्त, छप्पय, सवैया आदि छंदों की रचना की। बिहारी सतसई आज भी रसिक जनों का काव्य-हार बनी हुई है।

कल्पना की समाहार शक्ति और भाषा की समास शक्ति के कारण सतसई के दोहे गागर में सागर भरे जाने की उक्ति चरितार्थ करते हैं। उनके विषय में ठीक ही कहा गया है –

सतसैया के दोहरे ज्यों नावक के तीर।

देखन में छोटे लगैं, घाव करैं गंभीर।।

अपने काव्य गुणों के कारण ही बिहारी महाकाव्य की रचना न करने पर भी महाकवियों की श्रेणी में गिने जाते हैं। उनके संबंध में स्वर्गीय राधाकृष्णदास जी की यह संपत्ति बड़ी सार्थक है – यदि सूर सूर हैं, तुलसी शशी और उडगन केशवदास हैं तो बिहारी उस पीयूष वर्षी मेघ के समान हैं जिसके उदय होते ही सबका प्रकाश आछन्न हो जाता है।

रीति काल के कवियों में बिहारी प्रायः सर्वोपरि माने जाते हैं। बिहारी सतसई उनकी प्रमुख रचना हैं। इसमें ७१३ दोहे हैं। किसी ने इन दोहों के बारे में कहा हैः

सतसइया के दोहरा ज्यों नावक के तीर।

देखन में छोटे लगैं घाव करैं गम्भीर।।

(नावक (फारसी) = एक तरह का धनुष जिससे छोटे पैने तीर चलाये जाते थे, दोहरा = दोहा)

बिहारी शाहजहाँ के समकालीन थे और राजा जयसिंह के राजकवि थे। राजा जयसिंह अपने विवाह के बाद अपनी नव-वधू के प्रेम में राज्य की तरफ बिलकुल ध्यान नहीं दे रहे थे तब बिहारी ने उन्हें यह दोहा सुनाया थाः

नहिं पराग नहिं मधुर मधु नहिं विकास यहि काल।

अली कली में ही बिन्ध्यो आगे कौन हवाल।।

(श्लेष अलंकारः अली = राजा, भौंरा; कली = रानी, पुष्प की कली)

कहते हैं कि बात राजा की समझ में आ गई और उन्होंने फिर से राज्य पर ध्यान देना शुरू कर दिया। जयसिंह शाहजहाँ के अधीन राजा थे। एक बार शाहजहाँ ने बलख पर हमला किया जो

सफल नही रहा और शाही सेना को वहाँ से निकालना मुश्किल हो गया। कहते हैं कि जयसिंह ने अपनी चतुराई से सेना को वहाँ से कुशलपूर्वक निकाला। बिहारी ने लिखा है:

घर घर तुरकिनि हिन्दुनी देतिं असीस सराहि।

पतिनु राति चादर चुरी तैं राखो जयसाहि।।

(चुरी = चूड़ी, राति = रक्षा करके, जयसाहि = राजा जयसिंह)

बिहारी और अन्य रीतिकालीन कवियों ने भक्ति की कवितायें लिखी हैं किन्तु वे भक्ति से कम काव्य की चातुरी से अधिक प्रेरित हैं। किसी रीतिकालीन कवि ने लिखा है: आगे के सुकवि रीझिहैं चतुराई देखि, राधिका कन्हाई सुमिरन को तो इक बहानो है। बिहारी का एक दोहा है:

मोर मुकुट कटि काछनी कर मुरली उर माल।

यहि बानिक मो मन बसौ सदा बिहारीलाल।।

(काछनी = धोती की काँछ, यहि बानिक = इसी तरह)

सतसई का प्रथम दोहा है:

मेरी भववाधा हरौ, राधा नागरि सोय।
जा तन की झाँई परे स्याम हरित दुति होय।।

(झाँई = छाया, स्याम = श्याम, दुति = द्युति = प्रकाश)

राधा जी के पीले शरीर की छाया नीले कृष्ण पर पड़ने से वे हरे लगने लगते है। दूसरा अर्थ है कि राधा की छाया पड़ने से कृष्ण हरित (प्रसन्न) हो उठते हैं। श्लेष अलंकार का सुन्दर उदाहरण है।

बिहारी का एक बड़ा प्रसिद्ध दोहा है:

चिरजीवौ जोरी जुरै, क्यों न स्नेह गम्भीर।
को घटि ये वृषभानुजा, वे हलधर के बीर।।

अर्थात: यह जोड़ी चिरजीवी हो। इनमें क्यों न गहरा प्रेम हो, एक वृषभानु की पुत्री हैं, दूसरे बलराम के भाई हैं। दूसरा अर्थ है: एक वृषभ (बैल) की अनुजा (बहन) हैं और दूसरे हलधर (बैल) के भाई हैं। यहाँ श्लेष अलंकार है।

बिहारी शहर के कवि हैं। ग्रामीणों की अरसिकता की हँसी उड़ाते हैं। जब गंधी (इत्र बेचने वाला) गाँव में इत्र बेचने जाता है तो सुनिये क्या होता है:

करि फुलेल को आचमन मीठो कहत सराहि।
रे गंधी मतिमंद तू इतर दिखावत काँहि।।

(फुलेल = इत्र, सराहि = सराहना करके, इतर = इत्र, काँहि = किसको)

कर लै सूँघि, सराहि कै सबै रहे धरि मौन।
गंधी गंध गुलाब को गँवई गाहक कौन।।

(गँवई = छोटा गाँव, गाहक = ग्राहक)

इसी तरह जब गाँव में गुलाब खिलता है तो क्या होता हैः

वे न इहाँ नागर भले जिन आदर तौं आब।

फूल्यो अनफूल्यो भलो गँवई गाँव गुलाब।।

(नागर = नागरिक, आब = इज्जत)

नायिका के वर्णन में बिहारी कभी कभी अतिशयोक्ति का उपयोग करते हैं:

काजर दै नहिं ऐ री सुहागिन, आँगुरि तो री कटैगी गँड़ासा

यानी कि: ये सुहागन काजल न लगा, कहीं तेरी उँगली तेरी गँड़ासे जैसी आँख की कोर से कट न जाये। गँड़ासे से जानवरों का चारा काटा जाता है।

और सुनियेः

सुनी पथिक मुँह माह निसि लुवैं चलैं वहि ग्राम।

बिनु पूँछे, बिनु ही कहे, जरति बिचारी बाम।।

यानी कि विरहिणी नायिका की श्वास से माघ के महीने में भी उस गाँव में लू चलती है। विरहिणी क्या हुई, लोहार की धौंकनी हो गई!

विरहिणी अपनी सखी से कहती हैः

मैं ही बौरी विरह बस, कै बौरो सब गाँव।

कहा जानि ये कहत हैं, ससिहिं सीतकर नाँव।।

यानी कि मैं ही पागल हूँ या सारा गाँव पागल है। ये कैसे कहते हैं कि चन्द्रमा का नाम शीतकर (शीतल करने वाला) है? तुलना करिये तुलसीदास जी की चौपाई से। अशोकवन में सीता जी कहती हैं: पावकमय ससि स्रवत न आगी। मानुँहि मोहि जानि बिरहागी। अर्थात्: मुझको विरहिणी जानकर अग्निमय चन्द्रमा भी अग्नि की वर्षा नहीं करता।

कुछ दोहे नीति पर भी हैं, जैसेः

कोटि जतन कोऊ करै, परै न प्रकृतिहिं बीच।

नल बल जल ऊँचो चढ़ै, तऊ नीच को नीच।।

अर्थात् कोई कितना भी प्रयत्न करे किन्तु मनुष्य के स्वभाव में अन्तर नहीं पड़ता। नल के बल से पानी ऊपर तो चढ़ जाता है किन्तु फिर भी अपने स्वभाव के अनुसार नीचे ही बहता है।

इस लेख को बिहारी के दो दोहों के साथ समाप्त करता हूँ जिनमें वे भगवान को उलाहना दे रहे हैं:

नीकी लागि अनाकनी, फीकी परी गोहारि,

तज्यो मनो तारन बिरद, बारक बारनि तारि।

अर्थात् : हे भगवान लगता है आब आपको आनाकानी अच्छी लगने लगी है और हमारी पुकार फीकी हो गई है। लगता है कि एक बार हाथी को तार कर तारने का यश छोड़ ही दिया है।

कब को टेरत दीन ह्वै, होत न स्याम सहाय।

तुम हूँ लागी जगत गुरु, जगनायक जग बाय।।

अर्थात्: हे श्याम, मैं कब से दीन होकर तुम्हें पुकार रहा हूँ किन्तु आप मेरी सहायता नहीं कर रहे हैं। हे जग-गुरु, जगनायक क्या आपको भी इस संसार की हवा लग गई है?